International Journal of Information Movement *Vol. 8 Issue IX* *(January, 2024)*
Website: www.ijim.in *ISSN: 2456-0553 (online)* **Pages 29-32**

नयी कहानी आन्दोलन में टूटता हुआ मध्यम वर्ग

सुरेश कुमार मीणा
पीएच.डी. हिन्दी विभाग
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली
ईमेल– suresh.phd22.du@gmail.com

हिन्दी कहानी के इतिहास में नयी कहानी आन्दोलन एक ऐसा दौर है जिसमें हम एक साथ कई कथा प्रवृत्तियों को सक्रिय देखते हैं। हिन्दी कहानी के सफर में यह समय हिन्दी कथा–साहित्य का स्वर्णिम समय साबित हुआ। विशेष तौर से मोहन राकेश, कमलेश्वर, राजेन्द्र यादव, निर्मल वर्मा, फणीश्वरनाथ रेणु, मन्नु भंडारी, उषा प्रियंवदा और मार्कण्डेय कहानीकार सक्रिय रहे। नई कहानी उस समय लिखी गई जब कहानीकारों में देश की स्वतंत्रता को लेकर संशय की भावना का उदय हो रहा था। विभाजन के फलस्वरूप बड़े पैमाने पर मूल्य विघटन का परिवेश तैयार हो गया था। परिवर्तित परिवेश के अनुसार अपने नवीन दृष्टिकोण के आधार पर कहानीकारों ने समाज को बहुरंगी कहानियाँ प्रदान की। कहानीकार व्यक्त सत्य की परिधि एवं सामाजिकता के बंद कटघरे में अपने को मुक्त करके नयी कहानी कर रहे थे। जिसके परिणामस्वरूप उनकी कहानियों में एक और पारिवारिक विघटन दिखलाई पड़ता हैं इनके व्यापक यथार्थ बोध की कहानियों में ऊषा प्रियंवदा की वापसी, राजेन्द्र यादव की टूटना, कमलेशर की राजा निरबसिया, मार्कण्डेय की हंसाजाइ अकेला, निर्मल वर्मा की परिंदे, मोहन राकेश की परमात्मा का कुत्ता आदि के माध्यम से इनके ग्राम, कस्बा, नगर, महानगर के व्यापक फलक पर जीवन की सच्चाईयों को उकेरा गया है।

आगे 1960 ई. में इलाहाबाद से ही भैरव प्रसाद गुप्त के सम्पादन में एक और पत्रिका निकली 'नयी कहानियाँ'। 'कहानी' पत्रिका में छपने वाली कहानियों के कारण 1955 में नयी कविता के आधार पर नयी कहानी आंदोलन का नाम चल पड़ा जिसे 'नयी कहानियों' ने आगे बढ़ाया। किसी भी नाम से उसे पुकारा जाए, उससे जुड़े सवाल भी उठते हैं कि आज की कहानी की विकास दशा क्या है? उसकी विशेष उपलब्धियाँ कौन सी है?? जीवन के यथार्थ के प्रति उनकी दृष्टि क्या है? ऐसे अनेक प्रश्न हमारे सामने हैं। इस आंदोलन से जुड़ी पीढ़ी ने हिन्दी को कई चर्चित और यादगार कहानियाँ दी है। इन सभी कहानियों की एक सामान्य विशेषता ये है कि इसमें कहानीकार ने उन्हीं जीवन–विषयों को अभिव्यक्त किया है जिनसे उनका गहरा संपर्क रहा हैं इसके अन्तर्गत निर्मल वर्मा अपने शिमला के परिंदे की शाम के साथ लंदन की रात को जानते थे और इलाहाबाद में बसर करते हुए शेखर जोशी कुमाऊ के पहाड़ को भूल नहीं पा रहे थे। यहां आशय यह है कि वे रहे कहीं लेकिन हुए अपनी मिट्टी के ही।

नयी कहानी आंदोलन में विशेष तौर से एक नाम लिया जाता है– भीष्म साहनी। अपनी लेखनी द्वारा निरंतर इन सवालों से जुड़े रहे जो एक युवा और समकालीन की रचना चिंतन के सबसे अहम सवाल है। हम देखते हैं कि चीफ की दावत कहानी के माध्यम से कि कैसे समाज में मानवीय मूल्यों का नाश होता है। जहाँ 'चीफ की दावत' के बारे में विवेकी सिंह का मानना है कि कहानी हमारे सामने सवाल छोड़ जाती है कि माँ एक मूल्यहीन है या यह एक मूल्यवान वस्तु के नई सभ्यता के हाथों फिसलते चले जाने की कचोट भरी गाथा है? प्रो. नामवर सिंह ने इस कहानी पर विचार करते हुए माँ को पुरानी परंपरा का प्रतीक माना है। एक बूढ़ी माँ जो पुरानी परंपरा का प्रतीक बन बेटे को सर पर दर्द सी महसूस होने लगती है। नई कहानी आंदोलन पर टिप्पणी करते हुए नामवर सिंह ने लिखा है कि ''जिंदगी के घने जंगल में आज भी न जाने कितनी सजीव वस्तुएं पड़ी है जिनको अभी तक किसी कहानीकार से नाम नहीं मिल सका है जिन्हें किसी की आँखें नहीं मिल पाती है और जो बोल उठने के लिए कहानीकार की वाणी के अभी तक मुहताज है।''[1] जिसे नामवर सिंह जिंदगी के गहन जंगलों में खोया हुआ बता रहे थे, समाज को मूल्य धारा से कटे हुए ये वहीं गुमनाम किरदार है जिन्हें

भीष्म साहनी की आंखें मिली। चीफ की दावत कहानी में सोयी हुई माँ का सजीव चित्रण पाठक को आँखों देखा आभास होता है। ''दोनों पाँव कुर्सी की सीट पर रखे हुए और मुंह से लगातार खर्राटों की आवाजें आ रही थी। जब सिर कुछ देर के लिए टेढ़ा होकर एक तरफ थम जाता तो खर्राटे और भी गहरे हो उठते हैं।''[2] सामाजिक चिंतन के आधार पर व्यक्ति इसकी कहानियां उस व्यक्ति की आत्म कहानी है जो पूरे भारतीय समाज की संस्कृति तथा सभ्यता के मूल्यों को उजागर करती है।

नई कहानी आंदोलन में निर्मल वर्मा का योगदान आधुनिक हिन्दी कहानी के क्षेत्र में विशिष्ट है। उन्होंने जो विषय चुने वो अपने आप में नवीन व चिन्तनशील है। वास्तव में नयी कहानी में प्रौढ़ता, परिपक्वता तथा सहज स्वभाविक चित्रण कला देखने को मिलती है। इन्होंने मध्यवर्गीय व्यक्ति को आधुनिक जीवन की जटिलताओं तथा समस्याओं को संत्रस्त दिखाया है। इन्होंने अपनी प्रसिद्ध कहानी 'परिंदे' के माध्यम से जीवन में व्यापत एकाकीपन, मन की कुंठा, कामुक प्रवृत्तियां, टूटे एवं बिखरे व्यक्ति के जर्जर व्यक्तित्व का वर्णन किया हैं इसमें 'परिंदे' की लतिका की समस्या स्वतंत्रता या मुक्ति की समस्या है। अतीत से मुक्ति, स्मृति से मुक्ति, उस चीज से मुक्ति जो हमें चलाए चलती है और अपने रेले में हमें घसीट ले जाती है।''

पहाड़ में पीछे से आते हुए पक्षियों के झुंड को देखकर 'परिंदे' की लतिका, चलते–चलते सोचती है ''क्या वे सब प्रतीज्ञा कर रहे हैं? लेकिन कहाँ के लिए, हम कहाँ जाएंगे?''[3] कहानी नयी कहानी में नामवर सिंह के अनुसार प्रश्न मामूली है लेकिन कहानी के माहौल में वह सिर्फ पक्षियों का या लतिका का व्यक्तिगत प्रश्न नहीं रह जाता। हम कहाँ जायेंगे यह वाक्य सारी कहानी पर अर्थ–गंभीर विषाद की तरह छाया रहता है। इसमें नायिका लतिका बेशक भावुक मालूम होती है लेकिन इसमें कहानी समाप्त होते होते सारी भावुकता को मिटा कर दूसरा ही प्रभाव उत्पन्न कर देता है। इस बीच अपने–आप धीरे–धीरे स्वयं लतिका में भी परिवर्तन होता है ''अब वैसा दर्द नहीं होता, सिर्फ उसको याद करती हूँ, जो पहले कभी होता था।''

परिंदे कहानी के अंतर्गत इसके पात्र डॉक्टर के माध्यम से भी समाज में अकेलापन कुंठा तथा जीवन जीने की आशा को बताया गया है। कहानी में ''सोचने से क्या होता है मिस वुड जब बर्मा में था, तब क्या कभी सोचा था कि यहां आकर उम्र काटनी होगी लेकिन डॉक्टर कुछ कह लो, अपने देश का सुख कहीं और नहीं मिलता। यहां तुम चाहे कितने वर्ष रह लो, अपने को हमेशा अजनबी ही पाओगे।''[4] नामवर सिंह ने लिखा है कि ''परिन्दे से यह शिकायत दूर हो जाती है कि हिन्दी कथा–साहित्य अभी पुराने सामाजिक संघर्ष के स्थूल धरातल पर ही 'मार्कटाइप' कर रहा है। निर्मल वर्मा पहले कहानीकार हैं जिन्होंने इस दायरे को तोड़ा है बल्कि समाज के मनुष्य की बाह्य आंतरिक समस्या को उठाया है।''

वर्तमान में कहानी अपनी कहानीनुमा तस्वीर को लेकर नये विश्लेषण के साथ अवतरित हुई है। पत्र–पत्रिकाओं में नई पीढ़ी के कहानीकारों और आलोचकों ने वर्तमान कहानी को लेकर विवाद उत्पन्न किये हैं। आजादी ने जो नयी चेतना प्रदान की, उसमें आस्था व आशा का स्वर प्रमुख रहा है, जैसे–जैसे सामाजिक और राजनीतिक परिदृश्य बदला, वैसे वैसे ही व्यक्ति भी बदल गया है। दूधनाथ सिंह की दृष्टि में इनमें 'मोहन राकेश' का नाम सर्वाधिक उपयुक्त है ''क्योंकि 'उसकी रोटी' की पुरातनता से 'मिसपाल' और 'परमात्मा का कुत्ता' की आधुनिक तथा हास्यस्पदत्ता और व्यंग्य का चित्रण मोहन राकेश को एक मौलिक लेखक के रूप में प्रस्तुत करता है।''[5] साथ ही मोहन राकेश ने अपनी कहानी 'मलबे का मालिक' के माध्यम से उस वैयक्तिक ओर सामाजिक त्रासदी को अपना विषय बनाया है, जो 'समाज' में होने के भरोसे के टूटने से जन्मी है। समाज लोगों की कोई भीड़ नहीं, बल्कि वह तो संबंधों का ऐसा जाल होता है इस कहानी में गनी के सहज भाव से पूछने पर ''तू बता रक्खे,यह सब हुआ कैसे? तुम लोग उसके पास थे। सबमें भाई–भाई की सी मोहब्बत थी। अगर वह चाहता तो तुममें से किसी के घर नहीं छिप सकता था। रक्खे उसे तेरा भरोसा था। कहता था कि रक्खे

के रहते मेरा कोई कुछ नहीं बिगाड़ सकता।''[6] यहां कहानी के माध्यम से आन्तरिक पक्ष उभर कर आता है इसमें संबंध आपसी भरोसे पर टिका करते हैं। इसी भरोसे से बंधकर आस–पास रहने वाले लोग एक सांझे आस–पड़ोस को बनाते हैं जहां हम सिर्फ पारिवारिक रक्त संबंधों को ही नहीं जीते, भरोसे पर आधारित इन सामाजिक, संबंधों को भी जीते हैं। मोहन राकेश ने 'मलबे का मालिक' कहानी के माध्यम से कमजोर होती हमारी सामाजिकता और नागरिकता को उद्घाटित किया है। मोहन राकेश की एक और प्रसिद्ध कहानी 'परमात्मा का कुत्ता' के माध्यम से भी सरकारी दफ्तरों में व्याप्त लालफीताशाही तथा भ्रष्टाचार का सजीव चित्रण देखने को मिलता है ''एक तुम ही नहीं, यहां तुम सब के सब कुत्ते हो'' वह आदमी कहता रहा ''तुम सब भी कुत्ते हो और मैं भी कुत्ता हूँ। फर्क इतना है कि तुम लोग सरकार के कुत्ते हो और मैं परमात्मा का कुत्ता हूँ।''[7] इस कहानी के सन्दर्भ में यह बताया गया है कि सरकारी कर्मचारी लोगों की हड्डियां चूसते हैं और सरकार की तरफ से भौकते हैं। इसमें समाज की वास्तविक परिस्थितियों का चित्रण किया गया है। यहां 'कुत्ता एवं भौंकना', मात्र प्रतीक है जो आज 'जागरूक' और 'सचेत कार्यवाही' के अर्थ में समझे जाते हैं। अर्थात् जनता जब सचेत बनेगी तभी भ्रष्टाचारों का नाश होगा। आज भी सरकारी कार्यालयों की कार्यवाही में इस कहानी से भिन्न आचरण दिखाई नहीं पड़ता।

राजेन्द्र यादव ने अपनी कहानियों के विषय के कथ्य में प्रायः नगर जीवन के मध्य वर्ग एवं निम्न मध्य वर्ग का चयन किया है। सामाजिक और विडम्बनाएं मध्य वर्ग को रात–दिन चकनाचूर करती रहती है। यहां वर्ग विविध विषमताओं, अभावों, अंतः बाह्य विरोधों–तनावों, मानसिक कुंठाओं, परिवर्तित जीवन मूल्यों से उपजे संघर्षों से भरपूर जिजीविषा के साथ लड़ता रहता है और अपने अस्तित्व को बचाने–बनाये रखने के प्रयास में जुटा रहता है। उन्होंने कहा है ''व्यक्ति व्यक्ति के बीच जो कुछ तेजी से मर रहा है, बन और बदल रहा है और 'नया' जन्म ले रहा है, उस सबको खोजना समझना और व्यक्त करना नई कहानी की एक बहुत बड़ी विशेषता है।''[8] 'टूटना' कहानी में लीना नामक युवती है। वह स्वतंत्र अस्तित्व की इच्छा रखने वाली एक सम्पन्न एवं आभिजात्य परिवार की आधुनिक भारतीय स्त्री है। वह अपनी ही युनिवर्सिटी में पढ़ने वाले एक निम्न मध्यवर्गीय आर्थिक रूप से असंपन्न परंतु मेहनती एवं कुशाग्र बुद्धि वाले लड़के किशोर से प्रेम करने लगती है। इस तरह अपने अनुभूत जीवन सत्य को अभिव्यंजित करते हुए लेखक ने अपने में डूबते–उतराते घुटन–पीड़ा में ही जीते, अकेलेपन–खोखलेपन की समस्याओं से ग्रस्त व्यक्तियों के चित्र उकेरे हैं। आज के व्यक्ति के भीतर–बाहर घना शोर है, खामोशी है, घुटन और टूटन है, विषाद–संघर्ष और असंतोष है। यह मात्र किसी एक व्यक्ति या परिवार की कहानी नहीं है। आधुनिक स्त्री–पुरुष के दांपत्य संबंधों का यथार्थ प्रस्तुत करते हुए पुरुष के अंतर्मन की जटिल गुत्थियों, कुंठाओं को पकड़ने और उसे कहानी के माध्यम से सरलीकृत कर प्रस्तुत करने की कोशिश की है।

हम देखते हैं कि इन सभी कहानियों में सरलता है। किसी प्रकार की बनावट नहीं साथ ही शिल्प की अपेक्षा विषय को अधिक महत्व दिया गया है। भीष्म साहनी की कहानियां यथार्थ जीवन से सामग्री जुटाती है और कल्पना उसे रूप देती है। हम देखते हैं कि 'चीफ की दावत' कहानी के माध्यम से कैसे समाज में मानवीय मूल्यों का नाश होता है को चित्रित किया गया है। एक बूढ़ी माँ जो पुरानी परंपरा का प्रतीक बन बेटे को सर का दर्द सी महसूस होने लगती है। चीफ की दावत कहानी में सोयी हुई माँ का सजीव चित्रण पाठक को आंखों देखा आभास होता है। परंपरा से कटे भारतीय आधुनिकवादियों पर उन्होंने करारा व्यंग्य किया है यह व्यंग्य उनकी चर्चित कहानी 'चीफ की दावत' में मुखरित हुआ है। इनमें मानववाद का आधार वैज्ञानिक समाजवाद है जो श्रमजीवी समुदाय को सामाजिक शोषण से मुक्ति दिलाकर समता जैसे मानवीय मूल्यों पर आधारित व्यक्ति के वास्तविक स्वतंत्रता की बात करता है और इन मानवीयता के कारण ही उनके पात्र जीवन को बेहतर बनाने के लिए संघर्ष करते हैं। निर्मल वर्मा की कहानियों में बदलते समय की ध्वनि गूंजती है, जिसके अन्तर्गत कहीं–कहीं वे वर्तमान स्थितियों का उनकी कहानी 'परिन्दे' भी बिखराव व टूटन का साक्षात् प्रमाण

देती है। इसमें व्यक्ति अनिश्चित रहता है। वह अपने को क्या करे, क्या न करे की स्थिति में घिरा पाता है। इनकी कहानियों में मानवीय अनुभूतियों तथा चरित्र–चित्रणों में आधुनिक जीवन की जटिलताएं, मन की उलझनों और व्यक्तिगत जटिलताओं को उकेरा गया है। मोहन राकेश ने भी नयी कहानी आन्दोलन में अपने भोगे हुए यथार्थ का लेखा–जोखा प्रस्तुत किया है। उन्होंने 'परमात्मा का कुत्ता' के माध्यम से समाज में भ्रष्टाचारी को उकेरा वहीं 'मलबे का मालिक' कहानी में मानवीय संबंधों में आयी दरारें और जीवन में बदलते परिवेश की प्रतिक्रिया को बताया है। संबंधों में विघटन के कारण व्यक्ति के टूटते हुए यथार्थ का चित्रण, तनाव और दबावों के अन्तर्गत नागरिक जीवन की समस्याएं द्वन्द्व आदि को स्पष्ट रूप से उभारा है। उनका कहना है कि ''यूं तो पिछले वर्षों में मैंने कहानी के अतिरिक्त नाटक और निबंध भी लिखे हैं, परंतु किसी भी स्थिति को ठीक से पकड़ पाने या अभिव्यक्त कर पाने का जो सन्तोष मुझे कहानी लिखकर मिलता है, वह दूसरी रचनाओं में नहीं मिलता।''[9] राजेन्द्र यादव ने भी अपनी कहानी 'टूटना' में आधुनिक शिक्षित दंपति के रिश्तों के प्रतिकूल टूटने की नियति को तो दर्शाता है साथ ही मानसिक मनोग्रंथियों के बनने–टूटने की प्रक्रिया का द्योतक भी हैं इस तरह सामाजिक यथार्थ की लाक्षणिकता से युक्त यह सोद्देश्य एवं मौलिक है। इन सभी पर देखने को मिलते हैं। साधारण आदमी की बात करते हुए उनकी कहानियों का समूचा रचनात्मक विकास समकालीन कहानी को समृद्ध करता हुआ कहानी आंदोलनों के नये मानदंडों को अपनाने की वकालत करता है।

सन्दर्भ

1. सिंह नामवर, कहानी नयी कहानी, पृ.सं. 38 लोकभारती प्रकाशन, 2008 संस्करण
2. कुमार कृष्ण, कहानी के नये प्रतिमान, पृ.सं. 68, वाणी प्रकाशन, 2005 संस्करण
3. नौटियाल जयंती प्रसाद, हिन्दी की प्रतिनिधि कहानियां तात्विक विवेचन, 2007 संस्करण, पृ.सं. 72
4. मधुरेश, हिन्दी कहानी का विकास, पृ.सं. 66, लोकभारती प्रकाशन, 2014 संस्करण
5. सिंघल बिजेन्द्र, हिन्दी की विशिष्ट कहानियाँ, पृ.सं. 126, कला मंदिर
6. शर्मा शशि, हिन्दी कहानी, पृ.सं. 83
7. कहानी स्वरूप व संवेदना, राजेन्द्र यादव, पृ.सं. 58
8. एक दुनिया समानांतर, संपा. राजेन्द्र यादव, पृ.सं. 28
9. एक दुनिया समानांतर 'टूटना' संपा. राजेन्द्र यादव